1 भारतीय संगीत का सामान्य परिचय

कलाओं को मूलभूत रूप से दो भागों में वर्गीकृत किया गया है— ललित कलाएँ एवं अन्य उपयोगी कलाएँ। ललित कलाओं के पाँच प्रकार माने गए हैं— संगीत, काव्य, चित्रकला, मूर्तिकला एवं स्थापत्य कला। सभी ललित कलाओं में संगीत को श्रेष्ठ माना गया है। यह वह कला है, जिसमें स्वर और लय द्वारा हम अपने भावों को प्रकट करते हैं।

"गीतं, वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं संगीतमुच्यते।"

संगीत रत्नाकर, श्लोक 21, स्वरगताध्याय:

भावार्थ — गायन, वादन तथा नृत्य इन तीनों कलाओं के समावेश को संगीत कहते हैं। संगीत शब्द सुनते ही हमें गीत, वाद्य यंत्रों पर बजती धुन तथा नृत्य में थिरकते पैर आदि बातों का आभास होता है। इसीलिए संगीत में गीत, वाद्य व नृत्य तीनों समन्वित हैं। संगीत का मूल आधार 'स्वर' और 'लय' है। स्वर और लय के साथ भाषा/कविता/पद का समन्वय, संगीत को अनूठा आकर्षण प्रदान करते हैं। संगीत की अभिव्यक्ति विभिन्न प्रकार की गायन और वादन शैलियों द्वारा की जाती है। संगीत हमारी भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग है। यह अभिव्यक्ति का एक ऐसा माध्यम है जो व्यक्ति को एक-दूसरे के साथ जोड़ता है। केवल मनुष्य एवं जीव-जंतु ही नहीं वरन् पेड़-पौधों पर भी संगीत का प्रभाव पड़ता है। संगीत एक ऐसी औषधि है जो मनोवैज्ञानिक रूप से चित्त को एकाग्र कर उसे संतुलित बनाने की क्षमता रखता है।

चित्र 1.1— दिव्यांग बच्चों द्वारा समूह गीत की अनोखी प्रस्तुति

क्या आप उपरोक्त दिए गए कथन से सहमत हैं यदि हाँ तो संगीत के किसी भी प्रकार को गाइए या बजाइए और अपने अनुभवों को लिखिए।

© NCERT not to be republished

चित्र 1.2— भारत रत्न पं. भीमसेन जोशी द्वारा शास्त्रीय गायन प्रस्तुति

मार्गी व देशी संगीत

हम सब गान या गीत शब्द से परिचित हैं। यह शब्द संगीत के साथ दो हज़ार वर्षों से जुड़ा हुआ है। कुछ शब्दों को सुर एवं लय से सुशोभित कर इनकी रचना होती है। गायन, वादन व नृत्य में निपुण रचनाकारों द्वारा अपने कौशल से लोकरंजन के उद्देश्य से बनायी गई, नियमबद्ध इस तरह की रचनाओं को 'गान' के नाम से जाना जाता है। प्राचीन काल से 'गान' के दो रूप 'मार्गी' व 'देशी' माने गये हैं।

मार्गी संगीत

वह संगीत जिसमें शास्त्रों में वर्णित नियमों का कठोरता या दृढ़ता से पालन किया जाना अनिवार्य हो, उसे 'मार्गी संगीत' कहा गया। इसी का प्रयोग ब्रह्मा से भरत आदि गुणीजनों को प्राप्त हुआ। यह धार्मिक समारोह में निश्चित विधि विधान से गाया व बजाया जाता था। वैदिक या साम-संगीत का समावेश इसी धारा में पाया गया है। यह निश्चित व नियमबद्ध था। संगीत के ऋषि-मुनि इस तरह के संगीत को मोक्ष प्राप्ति का साधन मानते थे। *संगीत रत्नाकर* में कहा गया है कि—

मार्गोदेशीति तद् द्वेधा तत्र मार्ग स उच्यते।
यो मार्गितो विरिञ्चाद्यै प्रयुक्तो भरतादिभिः।।

***संगीत रत्नाकर*, श्लोक 22, स्वरगताध्यायः**

इसका अर्थ है मार्गी संगीत वह है जिसका प्रयोग ब्रह्मा के बाद भरत ने किया। यह अत्यंत प्राचीन और कठोर नियमों द्वारा गाया व बजाया जाता था। इसी कारण यह प्रचलन में नहीं रह पाया।

देशी संगीत

देशे देशे जनानां यद्रुच्याह्लदयरञ्जकम्
गीतं वादनं च नृत्तं तद्देशीत्यभिधीयते।।

***संगीत रत्नाकर*, श्लोक 23 स्वरगताध्यायः**

© NCERT not to be republished

अर्थात् विभिन्न स्थान की जनरुचि के अनुरूप हृदय का रञ्जन करने वाले गायन, वादन व नृत्य को 'देशी संगीत' कहा जाता है। विद्वानों का मानना है कि देशी संगीत की इस परिभाषा को ध्यान में रखना चाहिए। जब हम शास्त्रोक्त पद्धति पर आधारित सामगान से प्रवाहित शास्त्रीय संगीत की परंपरा को देखते हैं तो पाते हैं कि वह अनेक रागों, राग प्रकारों, गायन, वादन व नृत्य की विधाओं आदि से प्रेरित है। ग्रामराग, राग, रागांग, भाषांग, क्रियांग आदि एवं विभिन्न राग जैसे भैरव, जौनपुरी, तोड़ी आदि इसी परंपरा के भाग हैं। अनेक प्रकार के वाद्यों का निर्माण उनकी शास्त्रोक्त नियमों पर आधारित वादन तकनीक व वादन शैली में देखी जा सकती है। नृत्यों के अंतर्गत कत्थक, कुचिपुड़ी, भरतनाट्यम् आदि में शास्त्रों के अनुसार वर्णित हस्तमुद्राओं, भाव भंगिमाओं तथा पद संचालन की विधियों का भी प्रयोग देखने को मिलता है। तालों का विभाजन एवं लयकारी के विभिन्न रूप भी दृष्टिगोचर होते हैं। इन्हीं सब सांगीतिक विशेषताओं से यह अनुभव होता है कि संगीत का प्रचार जनरुचि से संबंध रखता है।

मार्गी संगीत का विकास सर्वत्र नहीं मिलता लेकिन देशी संगीत प्रचलन में है। मार्गी व देशी संगीत दोनों ही शास्त्रों में वर्णित नियमों पर आधारित थे। कुछ अन्य प्रमाणों के अंतर्गत परंपरागत रूप से चली आ रही अनेकानेक गेय विधाएँ, जैसे— प्रबंध, ध्रुपद, धमार तथा ध्रुपद की बानियाँ, ठुमरी गायन की प्रादेशिक विविधताएँ, टप्पा, चतुरंग, त्रिवट, स्वरमालिका, लक्षणगीत, अनेकानेक बंदिशें और सांगीतिक रचनाएँ, राग एवं रागों के प्रकार, गायन, वादन व नृत्य की शास्त्रनुमोदित विधाएँ व शैलियाँ, विभिन्न सांगीतिक प्रयोग आदि सब जनरुचि से निर्मित देशी संगीत में ही समन्वित हैं। शास्त्रोक्त नियमों की सीमा में रहते हुए भी बंदिशों व रचनाओं में विभिन्न प्रदेशों की भाषाओं, जैसे— ब्रज, अवधी, राजस्थानी, भोजपुरी आदि का प्रयोग हुआ। गायन व वादन शैलियों को अपने कलात्मक कौशल से विकसित करना भी देशी संगीत को परिभाषित करता है।

संगीत शास्त्रों में वर्णित नियमों के आधार पर संगीत का क्रियात्मक स्वरूप बनता है। समय के साथ-साथ क्रियात्मक स्वरूप में कलाकारों की नवीन प्रतिभाओं व कला कौशल के कारण कुछ नए राग, नई बंदिशें तथा नई विधाएँ जन्म लेती हैं। इनका पुन: विश्लेषण करते हुए संगीत के विद्वान कुछ नवीन सिद्धांतों व नियमों को ग्रंथों में अंकित कर देते हैं। इस प्रकार समय के साथ-साथ शास्त्र व क्रिया का आदान-प्रदान चलता रहता है और देशी संगीत एक स्वस्थ कला के रूप में विकसित होता रहता है।

चित्र 1.3— स्कूल के बच्चों द्वारा समूह गीत प्रस्तुति

© NCERT not to be republished

देशी संगीत के अतिरिक्त लोक संगीत भी जनरुचि पर आधारित होने के कारण यह देशी संगीत के अंतर्गत रखा जा सकता है। परंतु अंतर यह है कि लोक संगीत पूर्णत: जनरुचि के आधार पर आधारित है। विशिष्ट देश, काल व परिस्थिति के अनुकूल रीति-रिवाज, रहन-सहन, वेशभूषा, तीज-त्यौहार व दैनिक मनोरंजन के लिए कीर्तन, संकीर्तन, होरी, विवाह, जनेऊ, वर्षा गीत या झूले के गीतों आदि के रूप में कुछ भी गाना तथा अपनी स्वेच्छा से किन्हीं उपकरणों को या किन्हीं संगीत वाद्यों को बजाना और अपनी रुचि के अनुरूप उन गीतों व वाद्यों के साथ नृत्य करना लोक संगीत के विस्तार क्षेत्र को दर्शाता है।

निष्कर्ष स्वरूप विद्वानों का मानना है कि शास्त्रोक्त नियमों का दृढ़ता से पालन करते हुए निर्मित किया गया संगीत हर युग में मार्गी संगीत की श्रेणी में आता है। वहीं जनरुचि को महत्व देते हुए शास्त्रोक्त नियमों के शिथिल प्रयोग से युक्त संगीत देशी संगीत में समन्वित रहता है। पूर्णत: मौखिक परंपरा पर आधारित, स्वतंत्र व स्वच्छंद सांगीतिक प्रयोगों में युक्त, विभिन्न सामाजिक एवं सांस्कृतिक पर्वों व उत्सवों पर मनोरंजन के उद्देश्य से पल्लवित संगीत लोक संगीत के रूप में जाना जाता है जो देशी संगीत के अतंर्गत है।

?

1. *संगीत रत्नाकर* में दिए गए संगीत की परिभाषा बताइए।
2. वर्तमान काल में गाया जाने वाला शास्त्रीय संगीत देशी संगीत के अतंर्गत है या मार्गी संगीत के? क्यों?
3. लोक संगीत के क्षेत्र के बारे में आप जो भी जानते हैं, बताइए।
4. सूरदास के किसी पद को लीजिए। उसको लोक संगीत की तरह गाइए एवं शास्त्रीय संगीत के किसी भी राग में गाइए। अपने अनुभवों को लिखिए।

चित्र 1.4— स्कूल के बच्चों द्वारा समूह गीत प्रस्तुति

शास्त्रीय संगीत

शास्त्रों में वर्णित नियमों के आधार पर निर्मित संगीत को 'शास्त्रीय संगीत' कहा जाता है। चित्रकला, शिल्पकला, वास्तुकला आदि कलाओं का विकास पत्थर, पत्तों तथा कागज़ों पर बनाए गए चित्रों के रूप में विकसित हुआ है। संगीत ध्वनि प्रधान होता है जिसमें शब्द की अपेक्षा ध्वनि के प्रयोग के रूप में स्वरों के उतार-चढ़ाव को अधिक महत्व दिया जाता है। इसके साथ ही इसमें गति को आकर्षित और संतुलित कर प्रयोग में लाया जाता है। आदि काल से लेकर समय-समय पर किए गए विभिन्न सांगीतिक प्रयोगों का मंथन करके जब उन्हें निश्चित रूप दिया जाता है, तब वह शास्त्रबद्ध हो जाते हैं। शास्त्रों या ग्रंथों में संकलित नियमों के आश्रय से परंपराओं के अनुसार प्रवाहित होने

© NCERT not to be republished

वाली संगीत प्रणाली को ही 'शास्त्रीय संगीत' के नाम से जाना जाता है। व्यक्ति और समय निरंतर परिवर्तनशील होते हैं और इसीलिए उनकी रुचि व सामाजिक परिवेश तथा परिस्थितियों के अनुकूल संगीत के स्वरूप में भी अंतर आता-जाता है। इसी आधार पर समय-समय पर शास्त्रोक्त नियमों में परिवर्तन होते जाते हैं। इसीलिए परंपराओं का अनुपालन करते हुए शास्त्रीय संगीत मर्यादित रूप में विकसित होता है और उसमें नित नूतन आकर्षण भी बना रहता है।

शास्त्रीय संगीत के व्यावहारिक अंग में गायन, वादन तथा नृत्य के अनेक प्रकार और विविध शैलियाँ समायोजित हैं। इन्हें नियमबद्ध करने की परंपरा अथवा उनका सैद्धांतिक विश्लेषण करने की परंपरा वैदिक काल से चली आ रही है। इसी के अंतर्गत ऋग्वेद मंत्रों में से कुछ मंत्रों को गेय बनाकर *सामवेद* के रूप में संकलित किया गया। वैदिक कालीन पुराणों और ग्रंथों में ही संगीत शास्त्र के सिद्धांतों व नियमों के अंतर्गत सप्तस्वर, तीन ग्राम और उनकी मूर्च्छनाओं का विकास हुआ। इसी के साथ-साथ विभिन्न प्रकार के वाद्य भी विकसित हुए। मध्य काल से लेकर आधुनिक काल तक शास्त्रीय संगीत में अनेक परिवर्तन आए। गेय विधाओं के अंतर्गत ध्रुपद, धमार, दादरा, ख्याल, तराना आदि शैलियाँ प्रचलित हुईं। वाद्य यंत्रों की संरचना एवं बजाने के लिए बहुविधा तकनीक अपनाई गई।

उत्तर भारत में प्रचलित शास्त्रीय संगीत को 'हिंदुस्तानी संगीत पद्धति' के रूप में भी जाना जाता है। इसके अंतर्गत, ध्रुपद, धमार, ख्याल, तराना इत्यादि गाए-बजाए जाते हैं जिनका विस्तृत वर्णन अग्रिम पृष्ठों में समन्वित है। दक्षिण भारत में प्रचलित शास्त्रीय संगीत को 'कर्नाटक संगीत पद्धति' कहा जाता है। इसके अंतर्गत रागम्-तानम्-पल्लवी, वर्णम्, जावलि तथा तिल्लाना आदि विधाएँ समन्वित हैं। यद्यपि श्रुति ही दोनों का आधार है, लेकिन दोनों पद्धतियों में स्वरों की श्रुतियाँ, विधाएँ एवं भाषा भिन्न हैं।

उपशास्त्रीय संगीत

जिन गेय विधाओं में संगीत के नियमों के कठोर पालन की अपेक्षा रस भाव और रंजकता की प्रधानता रहती है, वे 'उपशास्त्रीय संगीत' की श्रेणी में आते हैं। ऐसी गेय विधाओं में शब्दों के भावों को स्वरों के विविध अलंकृत प्रयोगों द्वारा व्यक्त किया जाता है। कण, मींड, मुर्की, बोल-बनाव आदि अलंकरण से शब्दों को सौंदर्यपूर्ण रूप में अभिव्यक्त करना उपशास्त्रीय संगीत का विशेष उद्देश्य होता है। ठुमरी, टप्पा, दादरा, उपशास्त्रीय संगीत की महत्वपूर्ण गेय विधाएँ हैं। उपशास्त्रीय संगीत में एक राग से दूसरे राग में जाने की भी स्वतंत्रता होती है। रंजकता और भावाभिव्यक्ति का मूल उद्देश्य होने के कारण छोटे-छोटे स्वर समूहों का समावेश और भावों की सूक्ष्मता और सुकुमारता इस संगीत की विशेषता है।

उपशास्त्रीय संगीत के अंतर्गत हिंदुस्तानी संगीत में ठुमरी, दादरा, टप्पा, चैती आदि गायन शैलियों का समावेश है, जिनका विवरण निम्न प्रकार है—

1. **ठुमरी** — ठुमरी एक ऐसी गेय विधा है जिसमें लोक और शास्त्रीय, दोनों प्रकार के संगीत के तत्व विद्यमान हैं। ठुमरी को शृंगार रस प्रधान शैली माना गया है। इस गेय विधा में स्वर

© NCERT not to be republished

चित्र 1.5— गिरिजा देवी – प्रसिद्ध भारतीय शास्त्रीय संगीत कलाकार

व शब्द एक-दूसरे के पूरक हैं। इसीलिए एक ही शब्द को बोल-बनाव के रूप में विभिन्न स्वर नई-नई छवियाँ प्रदान करते हैं। अवध के नवाब वाज़िद अली शाह को ठुमरी का विशेष प्रचारक माना जाता है। तब से लेकर आज तक ठुमरी के विविध स्वरूप विकसित होते रहे हैं। ठुमरी में कठिन रागों की अपेक्षा सरल व संकीर्ण प्रकृति के रागों, जैसे— भैरवी, काफ़ी, खमाज, पीलू आदि का प्रयोग होता है। इसमें दीपचंदी, जत, चाचर, कहरवा आदि तालों का प्रयोग होता है। ठुमरी गायन में तबला वादक भिन्न-भिन्न लग्गियों का प्रयोग करते हैं जिससे ठुमरी गायन का सौंदर्य कई गुना बढ़ जाता है। वर्तमान समय में ठुमरी के दो प्रमुख रूप प्रचलित हैं—

(i) **बोल-बनाव की ठुमरी** — चैनदारी और ठहराव बोल-बनाव की ठुमरी की विशेषता होती है। कम शब्दों का प्रयोग करते हुए स्वरात्मक विहार से हाव-भाव दर्शाते हुए गीत में निहित संवेदनाओं को अभिव्यक्त करना ही इस ठुमरी की विशेषता मानी जाती है। स्वरों और शब्दों का गुँथाव तथा रागों का किंचित मिश्रण करना पूर्णत: ठुमरी गायक की सांगीतिक कल्पना एवं सौंदर्य दृष्टि पर निर्भर करता है।

(ii) **बोल-बाँट की ठुमरी** — बोल-बाँट की ठुमरी की रचना ख्याल गायन शैली की भाँति ही प्रतीत होती है। इसमें शब्द अधिक होते हैं और शब्दों के बीच अंतराल कम होता है। कण व मुर्की आदि का प्रयोग कुछ शिथिल रहता है परंतु बोल-बनाव की ठुमरी की अपेक्षा बोल-बाँट की ठुमरी में लय का काम अधिक दिखाया जाता है।

2. **दादरा** — दादरा उपशास्त्रीय संगीत की बहुत ही सुंदर व चपल-चलन युक्त विधा है। इस शैली में शब्दों की प्रधानता अधिक होती है। दादरा गीत, दादरा ताल के अतिरिक्त अन्य तालों में भी गाए-बजाए जाते हैं। इसमें ठुमरी के समान फैलाव युक्त बोल-बनाव नहीं होता, परंतु लय के साथ चलते हुए शब्दों व स्वरों को भिन्न-भिन्न रूप से गूँथते हुए भाव की अभिव्यक्ति की जाती है। इसमें एक से अधिक अंतरा गाने का प्रचलन है। यह विधा चंचल होती है इस विधा में स्वर व लय आधारित शब्दों का प्रयोग इस प्रकार किया जाता है कि दादरा का मूल रूप स्पष्ट होता रहे या जिस ताल का आश्रय लिया गया है, उसकी चाल स्पष्ट होती रहे। दादरा में प्रयुक्त गीत का काव्य वसंत, वर्षा आदि ऋतुओं से या राधा-कृष्ण के शृंगारात्मक वर्णन से संबंधित होता है। दादरा गायन के बीच-बीच में उस विषय से संबंधित दोहे तथा कुछ कवित्त आदि भी गाए जाते हैं, जिनका मूल रचना से सीधा संबंध नहीं होता है। इसमें भी तबले पर छोटी-छोटी लग्गियों का प्रभावपूर्ण वादन किया जाता है।

3. **टप्पा** — टप्पा शब्द की उत्पत्ति 'टप' से हुई है जिसका अर्थ है, कूदना, लाँघना या छलाँग लगाना। 18वीं शताब्दी में लखनऊ के नवाब आसिफुद्दौला के दरबार के एक पंजाबी गायक

© NCERT not to be republished

गुलाम नबी शोरी, जो 'शोरी मियाँ' के नाम से प्रसिद्ध थे, ने टप्पा गायकी को प्रचलित किया। पंजाब प्रदेश से संबंधित होने के कारण ही संभवत: टप्पा गायकी की गीत रचनाओं में अधिकांशत: पंजाबी, सिंधी व मुल्तानी भाषा के शब्दों का प्रयोग होता है। इस गायन विधा में शब्द, स्वर व लय तीनों को कहीं विश्राम नहीं मिलता। पूरी गायकी छोटी-छोटी द्रुत गति की तानों पर आधारित होती है। इस गायकी में कण, खटका व मुर्की का अधिक प्रयोग किया जाता है। काफ़ी, पीलू, खमाज, भैरवी, झिंझोटी आदि रागों में टप्पा गाया जाता है। इसकी गीत रचना में स्थायी व अंतरा, दो भाग होते हैं। इसके साथ जत, दीपचंदी, चाचर, अद्धा आदि तालों का प्रयोग किया जाता है।

4. **होरी** — उत्तर भारत के विभिन्न क्षेत्रों की लोक भाषाओं में अलग-अलग शैलियों की होरी सुनने को मिलती है। होरी मुख्यत: दीपचंदी, कहरवा, जत ताल आदि में गाई जाती है। होरी शब्द से यह ज्ञात हो जाता है कि इस शैली में होरी से संबंधित प्रसंग, राधा-कृष्ण के होरी खेलने व उनकी छेड़छाड़ इत्यादि का वर्णन किया गया है। यदि उपशास्त्रीय संगीत के अंतर्गत होरी गाते हैं तो होरी में छोटे-छोटे शब्द को लेकर तरह-तरह के बोल-बनाव बनाए जाते हैं। ऐसा करने से शब्दों के भाव स्पष्ट होते रहते हैं लेकिन जब हम होरी को लोक संगीत के संदर्भ में गाते हैं तो इसमें बोल-बनाव नहीं किया जाता है। यह मूलत: अवधी और ब्रज भाषा में गाई जाती है।

5. **चैती** — चैती अपनी मधुरता, सरलता व कोमलता के लिए जानी जाती है। इसे मुख्य रूप से चैत्र मास में गाए जाने के कारण चैती कहा गया है। 'हो रामा' शब्द इस गीत की विशेष टेक है। चैती भी शृंगार रस से परिपूर्ण गीत है। होली के बाद चैत्र महीने का आगमन होता है; इसी समय चैती गाने का प्रचलन है। चैती को उपशास्त्रीय गायन विधाओं के अंतर्गत रखा गया है। इसमें एक से अधिक अंतरा गाने का प्रचलन है। राम जन्म से संबंधित गीत भी इसमें गाए जाते हैं। यह मूलत: अवधी भाषा में गाई जाती है।

6. **कजरी** — लोक संगीत की विधाओं में कजरी भी गायन का एक प्रकार है। यह शृंगार रस से परिपूर्ण गीत का एक प्रकार माना जाता है। कजरी मुख्य रूप से सावन में गाई जाती है। बनारस व मिर्जापुर क्षेत्र कजरी गायन के लिए जाना जाता है। कजरी के गीतों में छंद के अनेक प्रकार देखने को मिलते हैं।

1. शास्त्रीय और उपशास्त्रीय संगीत के दो भेद बताइए।
2. सावन के महीने में किस तरह के उपशास्त्रीय संगीत की विधाएँ गाई जाती हैं। उनके बारे में कुछ बताएँ और गाएँ।
3. यू-ट्यूब या किसी अन्य स्रोत से कुछ ठुमरी सुनें तथा बताएँ कि बोल-बनाव और बोल-बाँट की ठुमरी में क्या अंतर मिला।
4. संगीत की कुछ विधाएँ ऋतुओं का वर्णन करती हैं। किन्हीं दो विधाओं में गीत को गाएँ और बताएँ कि ऋतुओं की कौन-सी बात उसमें परिलक्षित है।

© NCERT not to be republished

सुगम संगीत

सुगम शब्द का अर्थ है 'सरल' या 'सहज', इसीलिए सुगम संगीत का अर्थ है— सरलता या सहजता से गाया-बजाया जाने वाला संगीत। इस प्रकार के संगीत में विशिष्ट गेय विधा या शैली के स्वरूप को बनाए रखने के अतिरिक्त किसी अन्य प्रकार के नियमों का बंधन नहीं होता। इस संगीत में यदि राग का आधार लिया गया हो तो भी राग के नियमों में शिथिलता रहती है। भाव प्रदर्शन के लिए यदि आवश्यक हो तो आलाप-तान या स्वरों का प्रयोग गीत के सौंदर्यवर्धन के लिए किया जा सकता है। सुगम संगीत के विशेष तत्वों के रूप में हाव-भाव, गहराई, रंजकता और सुंदर शब्द इसे विशेष स्थान प्रदान करते हैं। शास्त्रीय या उपशास्त्रीय संगीत के बंधनों से मुक्त इस संगीत के अंतर्गत भजन, पद-गायन, काव्य, गीत, गज़ल आदि का समावेश होता है। कहा जा सकता है कि लय व तालबद्ध कविताएँ, ईश्वर का गुण-गान महान चरित्रों वाले व्यक्तियों पर आधारित गीत, ऋतुओं से संबंधित गीत, गज़ल आदि सुगम संगीत के अंतर्गत आते हैं। भिन्न-भिन्न प्रदेशों में अपनी विचारात्मक अभिव्यक्ति और भाषाओं के अनुरूप सुगम संगीत अपना आकार-प्रकार ग्रहण करता है।

चित्र 1.6— सुगम संगीत प्रस्तुति

यह विभिन्न प्रदेशों में अलग-अलग भाषाओं में रचा जाता है। इसके नाम भी भिन्न हैं, जैसे— तमिलनाडु में लिसाई, केरल में ललित संगीतम्, बंगाल में आधुनिक गीत, कर्नाटक में लघु संगीत।

लोक संगीत

लोक संगीत का तात्पर्य है सामान्य जनमानस का संगीत। लोकतंत्र, लोकप्रिय जैसे शब्दों के आईने में इसे देखा जा सकता है। कोई भी व्यक्ति अपने मन के भावों को या दैनिक क्रियाकलापों को स्वर या लय का प्रयोग करते हुए गायन या वादन के माध्यम से अभिव्यक्त करता है तो वह अभिव्यक्ति लोक संगीत में समाहित हो जाती है। भावों की सरलतम एवं मधुरतम अभिव्यक्ति ही लोक संगीत का मूल उद्देश्य होता है। जब भी कोई कला उभरती है तो वह सर्वप्रथम लोक ही होती है, बाद में परिष्कृत होकर वह शास्त्रीय कला के रूप में स्थापित हो जाती है।

व्यक्तियों से मिलकर समाज बनता है और विशिष्ट स्थान के लोगों से निर्मित समाज पर उस स्थान के रहन-सहन, वेश-भूषा और रीति-रिवाजों का प्रभाव होता है। जीवन से जुड़ी स्थितियाँ, घटनाएँ या जीवन शैलियाँ लोक गीतों के माध्यम से मुखरित होती हैं तो अनायास ही रस की वर्षा करने लगती हैं और मन को मोह लेती हैं। लोक संगीत में आम जन-जीवन के रीति-रिवाज और उसके सामाजिक परिवेश का प्रतिबिंब दिखाई देता है। इन गीतों की धुन सहज और सरल होती है।

© NCERT not to be republished

इन गीतों की रंजकता बढ़ाने के लिए स्थानीय लोक वाद्यों का प्रयोग किया जाता है। लोक संगीत लोक की चेतना को अभिव्यक्त करता है इसीलिए यह कभी पुराना नहीं होता। कुछ प्रदेशों के प्रचलित लोक गीतों व नृत्य शैलियों के नाम निम्नलिखित हैं—

प्रदेश	गायन एवं नृत्य शैलियाँ
असम	बिहू, छाऊ आदि।
उत्तर प्रदेश	होरी, बारहमासा, कजरी, चैती, रसिया, लांगुरिया, बिरहा, रासलीला, नौटंकी के गीत प्रकार आदि।
गुजरात	गरबा, रास, डांडिया आदि।
पंजाब	हीर, टप्पा, गिद्दा, भाँगड़ा आदि।
महाराष्ट्र	लावणी, मंगलागौर आदि।
राजस्थान	गोरबंद, मांड, घूमर, झूमर, कालबेलिया आदि।
जम्मू कश्मीर	भाण्ड, पाथिर, राउफ, जबरो, चकरी आदि।
अरुणाचल प्रदेश	टापू, पोनंग, नीशीदोऊ, लोकूबवांग आदि।
केरल	तिरूवादिरकली, पाना, तुल्लल, थेय्यम आदि।
आंध्र प्रदेश	धिमसा, बुर्रा कत्था, तोलू, बोम्मालता, रोत्तेला पंडुगा आदि।
पश्चिम बंगाल	बाऊल, रबिन्द्र संगीत, भटियाली, गोडीय, छऊ आदि।

किसी भी देश या प्रांत में लोक कलाएँ सांस्कृतिक धरोहर मानी जाती हैं। लोक संगीत को गाने-बजाने के लिए एवं इसकी संरचना हेतु किसी भी तरह के व्याकरण या शास्त्रीय पक्ष के ज्ञान की आवश्यकता नहीं होती है। लोक संगीत किसी विशिष्ट व्यक्ति की रचना नहीं होती है। लोगों की बोलचाल की भाषा, अंतर्मन के उद्‌गार या विचारों को सुर एवं ताल में निहित करने को ही लोक गीत कहा जाता है। दक्षिण भारत में लोक संगीत को नाट्टु पाट्टु, नाडोडी पाट्टु, जनपद गीतालु के नाम से जाना जाता है। अधिकतर लोक संगीत व्यवसाय, प्राकृतिक विश्लेषण, व्यक्ति विशेषता, रस्मोरिवाज की व्याख्या करते हैं, जैसे— फ़सल का रोपण और कटाई, प्रकृति की पूजा, आराध्य देवी-देवताओं का पूजन, समाज की रीतियाँ, शादी-ब्याह, जन्म-मृत्यु इत्यादि लोक संगीत के विषय होते हैं। यह मनोरंजन का एक अपूर्व साधन है जो ऊर्जा प्रदान करता है। अधिकतर लोक संगीत की रचना गाँव या दूरवर्ती क्षेत्रों में होती है। साधारण लोगों द्वारा रचे जाने के कारण इसके शब्द सरल लेकिन मार्मिक होते हैं। इनकी धुनें प्रांत विशेष की होती हैं और अधिकतर एक ही सप्तक में गाए-बजाए जाते हैं। इसी कारण विशिष्ट समाज की गाथाओं को मानव समाज के समक्ष प्रस्तुत करने में लोक संगीत का अमूल्य योगदान है। लोक संगीत की रचना स्वत: होती है और इसके रचनाकार संगीत में प्रशिक्षित भी नहीं होते हैं। लोक संगीत के गीतों को ऐसे नाम दिए

© NCERT not to be republished

चित्र 1.7— संध्या शर्मा द्वारा स्वांग गायन प्रस्तुति

जाते हैं जिससे विषय-वस्तु का सरलता से अनुमान लगाया जा सके। दक्षिण भारत में लोक गीतों के नाम हैं— आनन्दकलिप्पु, ओडम, नोन्डिचिंदू, वांछिपाट्टु, ऊन्जलपाट्टु इत्यादि जबकि उत्तर भारत में गरबा, रास, भाँगडा, गिद्दा, झूमर, घूमर, लावणी, जात्रा, गोरबंद आदि लोक गीतों व लोक नृत्यों में समाविष्ट हैं। लोक गीतों में पूरे गीत में धुन और लय एक जैसी रहती है और बहुत वैचित्र्य नहीं दिखाया जाता है। कुछ गीतों या धुनों में रागों के स्वर स्पष्ट सुनाई देते हैं, लेकिन वे अशोधित होते हैं, जैसे— पुन्नागवराली कुरंजी नीलाम्बरी, नाथनामक्रिया, नवरोज, आनन्दभैरवी इत्यादि। दक्षिण भारत में और उत्तर भारत में माँड, काफ़ी, भैरवी आदि रागों की छाप दृष्टिगोचर होती है। अगर हम कुरम गीतों को सुनें तो राग कुरंजी के स्वर समूह स्पष्ट सुनाई देते हैं। दक्षिण भारतीय लोक गीतों में चापू ताल, आदि ताल और रूपक ताल पाए जाते हैं। वास्तव में चापू ताल और उसकी विभिन्न लयकारियों के रूप लोक संगीत में पाए जाते हैं। लोक संगीत के कलाकार विविध वाद्य बजाने में सक्षम होते हैं। देखा जाता है कि लोक संगीत में तंत्री और सुषिर वाद्य की तुलना में अवनद्ध वाद्यों का अधिक प्रयोग किया जाता है।

तंत्री वाद्य, जैसे— एकतारा, रावणहत्था, कमाइचा, सारंगी इत्यादि उत्तर भारत के लोकप्रिय वाद्य हैं जबकि दक्षिण भारत में तुन्दिना, पुल्लवन्नकुडम तथा नन्दुनी आदि प्रचलित वाद्य हैं। सुषिर वाद्यों में शंख, अलगोज़ा, सिंगी या शृंगी, तुरही, बीन, शहनाई उत्तर भारत में तथा नादस्वरम, कुरुम कुज़ल, नेडुम कुज़ल तिरूचिन्नम, एककलम, मगुडी दक्षिण भारत के सुपरिचित वाद्य हैं। ढोल, ढोलक, डमरू, चंग, ताशा, नगाड़ा आदि उत्तर भारत में और तप्पट्टै, तम्बट्टम, तमक्कू, तन्तीपानइ, तविल, उडुक्कु, उत्तमी, कुण्डलम, खंजीरा, गुम्माटी इत्यादि दक्षिण भारत के प्रचलित अवनद्ध वाद्य हैं। घन वाद्यों के अंतर्गत घंटा, घड़ियाल, करताल, झाँझ, मंजीरा, घुंघरू, चिमटा, मुखचंग आदि उत्तर भारत में प्रचलित हैं जबकि दक्षिण भारत के घन वाद्यों में समन्वित होने वाले जालरा, कुज़ीतालम, सेमक्कलम, कइचिलम्बु आदि कुछ प्रचलित लोक वाद्य धातु से बनाए जाते हैं। लोक संगीत के कई प्रकार पाए जाते हैं—

1. **नैतिक गान** — समाज में नैतिकता का पाठ पढ़ाते हैं।
2. **काम-काज गीत** — खेती बाड़ी, मछली पकड़ना, दूध बेचना या ग्वालों का काम करना, ठेला चलाना, नौका गीत। ये सभी गीत विभिन्न तरह के काम-काज का विवरण देते हैं।
3. **वर्षा एवं खेती आधारित गीत** — यह गीत वर्षा एवं खेती के अवसर पर गाए जाते हैं।
4. **लोरी** — बच्चों को सुलाने के गीत।

© NCERT not to be republished

5. **महत्वपूर्ण व्यक्तियों से संबंधित गीत**— यह गीत महत्वपूर्ण व्यक्तियों से संबंधित होते हैं।
6. **सामूहिक गीत** — समूह में एकत्रित व्यक्तियों के द्वारा गाए जाने वाले गीत, जैसे— देश प्रेम, सांस्कृतिक गरिमा, आध्यात्मिक उपदेशों पर आधारित अथवा सत्संग में गाए जाने वाले भक्ति गीत इत्यादि।
7. **त्योहारों के गीत** — देश में मनाए जाने वाले विभिन्न त्योहारों पर गाए जाने वाले गीत।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि ध्वनि व लय के आश्रय से भारत के विभिन्न प्रांतों के ग्रामीण अंचलों में फैला हुआ। लोक संगीत सामूहिक या एकल गायन-वादन के रूप में विभिन्न क्षेत्रों की आंचलिक आभा से युक्त होकर अपनी-अपनी प्रादेशिक चौपालों, खेत-खलिहानों व गली-गलियारों में विद्यमान है। सुख-समृद्धि, पूजा-अर्चना, प्राकृतिक तत्वों, जैसे— वर्षा, धूप, अग्नि, जल आदि के प्रति आभार प्रकट करते हुए उनको पूजा या यज्ञों के माध्यम से किए जाने वाली विधियाँ आदि भारत की संस्कृति को दिग्दर्शित करती हैं। उन विधियों में अथवा उन अवसरों पर प्रयुक्त होने वाला संगीत ही लोक संगीत के विस्तृत क्षेत्र को प्रकाशित करता है।

दक्षिण भारत में देव-पूजा से संबंधित लोक गीत के कुछ प्रकार विशेष रूप से ध्यानाकर्षक हैं—

1. **सोपान संगीतम** — यह संस्कार केरल के मंदिरों में कार्यान्वित है। मंदिर के अंदर जहाँ देवी-देवता विराजमान होते हैं, वहाँ तक पहुँचने की सीढ़ियों को सोपान कहा जाता है। हिंदुओं के इन मंदिरों में जब पूजा के रीति-रिवाज के अनुसार कार्य किए जाते हैं तो मंदिरों की सीढ़ियों पर 'मरार' नामक संप्रदाय संगीत प्रस्तुत करता है। इस गायन शैली के साथ एडैक्का बजाया जाता है। इस पवित्र प्रथा में 'गीत गोविन्दम', जो 'अष्टपदी' नाम से परिचित है, वह भी प्रस्तुत किया जाता है। सोपान संगीत की गायन शैली, राग, ताल सभी को दूसरी शैलियों को प्रस्तुत करने के लिए अपनाया गया है, जैसे — कृष्णनाट्टयम, कथकली और अष्टपदीथाट्टम।
2. **तेवारम/तिरूवाचकम** — तमिलनाडु के शैवीय समुदाय के लोग इन शैवीय स्तोत्रों को गाते-बजाते हैं। ओदुवार नामक समुदाय में इन स्तोत्रों को अप्पर, तिरूज्ञान समबन्धर, सुंदरमूर्ति द्वारा रचित किया गया और इन्हें शैवीय संस्कार के लिए पेश किया जाता है। इनके राग और ताल प्राचीन तमिल शास्त्रीय संगीत में पाए जाते हैं। भगवान शिव के लिए रचे गए कवि एवं साधु माणिक्यवाचकर द्वारा इसी संस्कार में बीस पंक्तियों की एक और अन्य शैली का प्रदर्शन किया जाता है जिसे तिरूवेम्पावई नाम से जाना जाता है।
3. **तिरूप्पावई एवं अन्य दिव्य प्रबंध** — मुडियेत्तु, अयप्पन पाट्टु, भगवती पाट्टु, सर्पम पाट्टु, नावोरू इत्यादि दक्षिण भारत की सांगीतिक रचनाएँ, विभिन्न देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना के लिए गाई-बजाई जाती हैं। पुल्लुवन्कुडम, उडुक्कु, नादस्वरम, तविल इत्यादि वाद्य यंत्रों का प्रयोग भी उपरोक्त दिए गए संस्कार गीतों के साथ संगत के लिए प्रयोग किया जाता है।

© NCERT not to be republished

सारांश

संगीत एक ललित कला है। इसमें गायन, वादन और नृत्य समाहित हैं। श्रुति मधुर ध्वनि संगीत उपयोगी है। मनुष्य जाति हज़ारों वर्षों से संगीत द्वारा समाज को सुसंस्कृत करती आई है। इसी मानसिकता के कारण लोक संगीत, मार्गी व देशी संगीत, सुगम संगीत, शास्त्रीय संगीत एवं उपशास्त्रीय के कई प्रकार विकसित हुए हैं। लोक संगीत तो सभी जनमानस के मुख से प्रस्फुटित श्रुति मधुर वाक है जो सुर और ताल द्वारा सुसज्जित होकर सभी के मन को भाता है। इसके गाने के लिए कोई विशेष नियमावली नहीं है। सिर्फ़ सुर और ताल से सजी मनुष्य के हृदय के भावों की अभिव्यक्ति है। इसी को आधार या बुनियाद मानकर संगीत में रुचि रखने वाले शोधकर्ताओं ने स्वरों को परिष्कृत कर उनके चलन के विभिन्न मार्ग खोजे। लय को बाँधकर अनेक तरह से अभिव्यक्त किए और संगीत की राह बन गई जो अनेक विधाओं से सुसज्जित है। इस अध्याय में उसी संगीत का परिचय है।

कुछ विशेष शब्द

मार्गी संगीत, देशी संगीत, शास्त्रीय संगीत, उपशास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत, लोक संगीत

अभ्यास

इस पाठ को आप पढ़ चुके हैं। आइये, नीचे लिखे प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास करें–

1. *संगीत रत्नाकर* के अनुसार संगीत की परिभाषा बताइए।
2. कर्नाटक संगीत पद्धति में प्रचलित विधाएँ कौन-सी हैं?
3. उपशास्त्रीय संगीत की गायन शैली टप्पा की रचनाओं में अधिकांशत: किन भाषाओं के शब्दों का प्रयोग होता है?
4. लोक संगीत का मूल उद्देश्य क्या है?
5. ठुमरी के प्रचलित प्रमुख दो रूप कौन-से हैं?
6. दक्षिण भारतीय लोक संगीत की प्रमुख तालें कौन-सी हैं?
7. उपशास्त्रीय संगीत की परिभाषा बताते हुए इसकी पाँच विधाओं के नाम बताइए।
8. लोक संगीत को परिभाषित करते हुए इसमें प्रयुक्त होने वाले प्रमुख तंत्री, सुषिर एवं अवनद्ध वाद्यों के नाम बताइए।

© NCERT not to be republished

9. उपशास्त्रीय संगीत गायन शैली टप्पा को विस्तारपूर्वक समझाइए।
10. ललित कलाएँ कितने प्रकार की होती हैं? इन कलाओं में किसे श्रेष्ठतम माना गया है?
11. ठुमरी को परिभाषित करते हुए ठुमरी के प्रमुख दो रूपों का विस्तृत वर्णन कीजिए।
12. सुगम संगीत से आप क्या समझते हैं? विस्तार से समझाइए।
13. समाज में लोक संगीत का क्या महत्व है? अपने विचार विस्तारपूर्वक समझाइए।
14. हिंदुस्तानी संगीत पद्धति की प्रचलित विधाओं का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए।
15. तिरूवेम्पावई नामक शैली को विस्तार से समझाइए।

सही या गलत बताइए–

1. संगीत एक ऐसी औषधि है जो मनोवैज्ञानिक रूप से चित्त को एकाग्र कर उसे संतुलित बनाने की क्षमता रखती है। (सही/गलत)
2. शोरी मियाँ को ठुमरी का विशेष प्रचारक माना जाता है। (सही/गलत)
3. उपशास्त्रीय संगीत में एक राग से दूसरे राग में जाने की स्वतंत्रता नहीं होती है। (सही/गलत)
4. ठुमरी एक ऐसी विधा है जिसमें लोक और शास्त्रीय, दोनों प्रकार के संगीत के तत्व विद्यमान हैं। (सही/गलत)
5. ढोलक, उडुक्कू एवं गुम्माटी एक प्रकार के सुषिर वाद्य हैं। (सही/गलत)
6. 'हो रामा' शब्द चैती नामक गीत की विशेष टेक है। (सही/गलत)
7. दादरा गीत, दादरा ताल के अतिरिक्त अन्य किसी ताल में गाए-बजाए नहीं जाते हैं। (सही/गलत)
8. बोल-बाँट की ठुमरी की रचना ख्याल गायन शैली की तरह ही प्रतीत होती है। (सही/गलत)
9. कजरी पंजाब क्षेत्र की एक प्रचलित गायन शैली है। (सही/गलत)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–

1. गायन, वादन तथा नृत्य के समावेश को _____ कहते हैं।
2. संगीत की दोनों पद्धतियों का आधार _____ है।
3. नवाब वाज़िद अली शाह को _____ का प्रचारक माना जाता है।
4. चैती को _____ माह में गाया जाता है।
5. राजस्थान का लोकप्रिय लोक नृत्य _____ है।
6. सोपान संगीतम के अंतर्गत मंदिरों की सीढ़ियों पर _____ नामक संप्रदाय संगीत प्रस्तुत करता है।
7. तमिलनाडु में सुगम संगीत को _____ नाम से जाना जाता है।

© NCERT not to be republished

विभाग 'अ' के शब्दों का 'आ' विभाग में दिए गए शब्दों से मिलान करें–

अ	आ
(क) ललित कला	1. शोरी मियाँ
(ख) हिंदुस्तानी संगीत	2. जम्मू-कश्मीर
(ग) ठुमरी	3. अवनद्ध वाद्य
(घ) पल्लवी	4. मिर्जापुर
(ङ) टप्पा	5. सुषिर वाद्य
(च) कजरी	6. अष्टपदी
(छ) गोडीय	7. धातु वाद्य
(ज) चकरी	8. ध्रुपद
(झ) कोम्बू	9. कर्नाटक संगीत
(ञ) तन्तीपानई	10. पश्चिम बंगाल
(ट) कइचिलम्बु	11. मूर्तिकला
(ठ) गीत गोविन्दम	12. नवाब वाज़िद अली शाह

विद्यार्थियों के लिए गतिविधियाँ– परियोजना कार्य

1. अपने परिवेश में होने वाले समारोहों/उत्सवों में बजाए जाने वाले विभिन्न वाद्यों के छायाचित्रों का संकलन कर, अध्याय 'भारतीय संगीत का सामान्य परिचय' में वर्णित वाद्य-वर्गीकरण के आधार पर वर्गीकृत करें। समारोहों व उत्सवों में संगत या स्वतंत्र वाद्य-वादन करने वाले कलाकारों का संक्षिप्त साक्षात्कार करके निम्न बिंदुओं पर चर्चा कर विवरण एकत्र कीजिए—
   - कलाकारों की जीविका के अन्य स्रोत
   - कलाकारों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि व रहन-सहन
   - विश्व के मानचित्र पर इनके पारंपरिक संगीत का चित्रण एवं महत्व
2. वर्तमान समय में प्रचलित सोशल-नेटवर्किंग साइट्स, जैसे— यू-ट्यूब, फ़ेसबुक और इंस्टाग्राम आदि पर पाई जाने वाली विभिन्न शास्त्रीय व लोक शैलियों की प्रस्तुतियों का आकलन कर निम्न बिंदुओं को स्पष्ट कीजिए—
   - शैली का विवरण एवं पृष्ठभूमि
   - शैली में प्रयुक्त ताल एवं वाद्यों का विवरण
   - प्रस्तुति में प्रयोग किए गए विभिन्न ध्वनि यंत्रों (sound equipment) का संक्षिप्त विवरण
   - प्रस्तुतिकरण में मंच सज्जा एवं वेशभूषा का महत्व

© NCERT not to be republished

चित्र 1.8— भारत की प्रसिद्ध महिला तबला वादक डॉ. आबान ई मिस्त्री

भारतीय संगीत में प्रथम

प्रसिद्ध महिला तबला वादक डॉ. आबान ई मिस्त्री (6 मई 1940–30 सितंबर 2012) ऐसी पहली भारतीय महिला थीं जिनको पेशेवर तबला वादक के रूप में प्रसिद्धि मिली। 20 जनवरी 2018 को महिला और बाल विकास मंत्रालय द्वारा आयोजित एक कार्यक्रम में डॉ. आबान को मरणोपरांत 'भारत की पहली महिला तबला वादक' के रूप में सम्मानित किया गया। वह तबला के इतिहास के बारे में गहन शोध में अपने योगदान के लिए जानी जाती हैं।

© NCERT not to be republished